प्रदान करेगी? और इसलिए यह अस्वाभाविक है, यह संभव भी नहीं हैं क्योंकि यह प्रकृति के खिलाफ है। और इसलिए यह चिन्तन भी क्यों चला। जब इसके मूल में जाते हैं तो इसका परिणाम यह होगा कि जो सामर्थ्य, सम्पन्न, शक्तिशाली होगा उसकी बात चलेगी क्योंकि धर्म नहीं, राष्ट्र नहीं, सीमा नहीं, वह जो शक्तिशाली है, उसका वर्चस्व है। दुनिया में अपना वर्चस्व स्थापित करने का राक्षसी विचार है वही राष्ट्र रहित, धर्म रहित की बात कर रहे हैं क्योंकि हम दुनिया के स्वामी बनना चाहते हैं।

जो मैं मानता हूं उसी मान्यता पर आपको चलना पड़ेगा। यह राष्ट्र रहित, धर्म रहित, संस्कृति रहित, परंपरा रहित मानव की बात करने वाले कहीं न कहीं इस मानसिकता के एक कोने में विचार को लेकर चले हैं कि हम शक्तिशाली बनेंगे, हमारा ही वर्चस्व होगा। सारी दुनिया को हमारे ही रास्ते से चलना पड़ेगा। ये कौन सा राष्ट्रवाद है, ये कौन सा विचार है, ये कौन सा भाव है? इसलिए पं. दीनदयाल जी ने कहा कि सांस्कृतिक राष्ट्रीय एकात्मता का आग्रह रखना चाहिए। राजनैतिक राष्ट्रवाद से हटकर हम सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को बलवान करते जायें और राष्ट्र की एकात्मता बनी रहे इसका आग्रह पंडित जी के अन्यान्य कई प्रकार के भाषणों में प्रस्तुत करते समय वह इसी बात को लेकर आग्रहपूर्वक कह रहे हैं। इसलिए पंडित जी की सोच में एक मूलभूतताएं हैं। और इसलिए प्रश्न आता है आज हम अगर भारत के बारे में सोचते हैं तो ऐसे विभेदकारी चिन्तन रखने वाले वह कैसे असफल हो गये। इसके लिए हमको सोचना पड़ेगा कि जो इस देश के अन्दर भेद का ही बीज बोकर और समाज को आपस में संघर्ष करने के लिए लगा रहे हैं और सांस्कृतिक बातों को गुरुत्व मानकर, एक दकियानूसी मानकर उनके उपर टीका टिप्पणी करते हुए जो समाप्त करने के लिए लगे हुए हैं और समाज का विवेचन बना रहे, संघर्ष चलता रहे उसी पर हमारा राजनैतिक स्वार्थ सिद्ध होने वाला है ऐसी विभेदकारी देश के अन्दर की और देश के बाहर की शक्तियों के बारे में हमको जाग्रत करना पड़ेगा। और उनके प्रयासों को असफल करने की दिशा में हमको चलना पड़ेगा। एक शब्द का प्रयोग दीनदयाल जी ने स्थापित किया है। वे कहते हैं कि इस प्रकार के राष्ट्र के बारे में मन के अन्दर भाव रहना। तो मैंने पहले ही कहा कि एक जन, एक भूमि, एक विचार लेकर चलने वाला, मानव कल्याण का विचार करने वाला, वह जो राष्ट्र का भाव है उसको पं. दीनदयाल जी ने चिति